प्रकाशक—
साहित्य क्षेत्र, प्रकाशन।
जयपुर।

प्रथम बार : २०००
१९५०
मूल्य—एक रुपया

मुद्रक—
श्यामकुमार गर्ग
हिन्दी प्रिन्टिंग प्रेस,
शिवामिश्र क्वीन्स रोड, दिल्ली।

विषय-सूची

आमुख

इस अल्पाकार पुस्तक में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद के जीवन की संक्षिप्त कथा का वर्णन सुप्रबन्धित है।

इस पुस्तिका का उद्देश्य उनकी जीवन कथा का अध्ययनात्मक विवेचन न होकर, उनके जीवन और चरित्र दोनों की सुपरिचित समीक्षा है जिसका आधार उनकी आत्मकथा और लेखक की व्यक्तिगत जानकारी है जो उनके प्रमुख सेवक और प्रहरी के रूप में उनकी रुग्ण-शय्या के अत्यन्त सामीप्य द्वारा जयपुर में सन् १९४० ई० में प्राप्त हुई थी।

इस पुस्तक में राष्ट्रपति के मुँहबोले नाम 'बाबू' का ही अधिक प्रयोग किया गया है। बाबू का बिहार के महापुरुषों में प्रथम स्थान है। वही प्रथम बिहारी हैं जिन्हें राष्ट्रपिता ने अपने हृदय से लगाया। जो बाबू, बापू के वास्तविक रूप से बाबू रहे थे आज वे राजमुकुट से सुशोभित हो सिंहासनारूढ़ हुये हैं। यदि वे आज भारतीय नियामकों के मस्तिष्क का प्रतिबिम्ब हैं तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि कल वे राष्ट्र की आत्मा बनकर रहेंगे। प्रथम शब्द की उपयुक्तता बाबू के नाम अतिरिक्त अन्य नाम में निहित होकर भी सार्थक सिद्ध नहीं होती।

वे शिक्षा में प्रथम व कानून में प्रथम और सेवा में प्रथम इसलिये नहीं थे कि वे आज शासन और राजशक्ति में प्रथम पद प्राप्त करें।

बाबू के जीवन का पूर्वार्द्ध, जो कि प्रारम्भ से ही निरन्तर संघर्ष और निस्वार्थ परिश्रम से परिपूर्ण रहा है, आज राजनीति के उत्तुंग शिखर पर लोकनायत्व को प्राप्त हुआ है, मानो यह उनके जीवन के उत्तरार्द्ध के लिये ही बना था, जो बापू के उद्देश्य की पूर्ति और विश्व-शांति की ईश्वरीय योजना की चरम सीमा की प्राप्ति से उन्हें भाग्यशाली पुरुष इंगित करेगा।

आज जबकि दुनिया सब प्रकार के अभावों से पीड़ित है, तीसरे विश्वयुद्ध की सम्भावना तथा अणुशक्ति के विध्वंसात्मक विनाश के दृश्यों से भयभीत है, प्रजातन्त्रीय भारत हमारे बाबू की शुभ संरक्षण में विश्वनियन्ता से प्रेरणा लेकर जनतन्त्र की शांति में संस्कृति का सुख उपभोग करेगा और साम्यवाद की निरंकुशता की भयंकर महा-मारी को एक खुली चुनौती सिद्ध होगा।

यदि महात्मा गांधी के अहिंसा धर्म द्वारा हमारा नैतिक स्तर ऊँचा उठा है, हमें राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है और यदि पंडित जवाहर-लाल नेहरू के सुदृढ़ चरित्र-सूत्र ने अन्तरिम शासन की ढीली मणियों को बाँधकर रक्खा है तो बाबू के अग्नि-परीक्षित जीवन और चरित्र का पावन-तत्व अपने देशवासियों की सुख, शान्ति, सम्पन्नता और समृद्धि का विश्वसनीय प्रेरक ही नहीं अपितु संसार के सभी राष्ट्रों के निर्धन, पीड़ित, निस्सहाय, निराश्रित और अरक्षित प्राणियों के लिये आशा का सन्देश होगा।

अन्त में हम अपने बापू को प्रार्थना और मंगलकामना के साथ समय और संसार के स्वामी के कर-कमलों में पवित्र राष्ट्रीय धरोहर के रूप में सौंपते हैं और आशा करते हैं कि इसके प्रति बापू के असमय प्रस्थान के समान विश्वासघात नहीं होगा।

—लेखक

: १ :

जीवन की एक झलक

शब्द की मधुरता के कारण अपने मुँहबोले नाम 'बाबू के रूप में अधिक प्रसिद्ध डा० राजेन्द्रप्रसाद का जन्म, बिहार प्रान्त के सारन जिले के जीरादेई गाँव में तीसरी दिसम्बर १८८४ ई० को हुआ।

यदि कुलीनता पर किसी के व्यक्तिगत वातावरण द्वारा कोई प्रभाव हो सकता है तो बाबू को सज्जनता तथा मान प्रतिष्ठा अपनी वंश-परम्परा के नाते सुपर्याप्त परिमाण में पैतृक सम्पत्ति के रूप में मिली है।

उनकी जन्मजात कुलीनता तथा रक्त की पवित्रता अथवा राज्य के दीवान श्री चौधरलाल के अनुज श्री मिश्रीलाल तक ज्ञात होती है जो तीस वर्ष के लम्बे काल तक राज्य की विश्वसनीय सेवा करने के पश्चात् बाबू के जन्मस्थान में आ बसे थे। दीवानपद का सम्मान अल्पवेतन से नहीं, अपितु सामाजिक स्तर और प्रतिष्ठा से ही जाना जा सकता है।

श्री मिश्रीलाल, बाबू के पिता, महादेव सहाय को छोड़कर अल्पावस्था में ही चल बसे। इनका लालन-पालन इनके दीवान चचा द्वारा

उतने ही लाड़-प्यार तथा सावधानी से हुआ जितना उनके अपने लड़के जगदेवसहाय का।

महादेव सहाय के पाँच पुत्र हुये जिनमें हमारे बाबू सबसे छोटे थे। बाबू के जन्म पर उनके माता-पिता अथवा कुल के अन्य संबन्धियों में से किसे ज्ञात था कि उनका सबसे छोटा पुत्र भारत के वैधानिक इतिहास में नवजात जनतंत्र के प्रथम सेवक के रूप में सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर लेगा।

बाबू के श्रेष्ठ स्थान के महत्व पर विधान सभा में विभिन्न विचार-धाराओं का प्रतिनिधित्व करनेवाले उनके निर्वाचकों की सहानुभूति तथा सद्भावना की छाप है। बाबू का अद्वितीय उत्कर्ष उनके रक्त, अश्रु तथा अथक श्रम से रंजित जीवन संघर्ष का सुफल है।

जन्म से ही कठिन परीक्षाओं तथा सफलताओं, पीड़ित रुदन और आनन्दित उच्छ्वासों से पूर्ण नाटकीय रोचकता से ओत-प्रोत उनका जीवन अद्भुत कहानी है। जो घर, विद्यालय, समाज तथा राजनीति के अनेक स्थानों पर घटित होती रही है।

उनकी ज्येष्ठ बहिन भगवतीदेवी जो पति की मृत्यु पर विधवा होने के दिन से ही बाबू के घर में रहने लगी, सम्बन्धी स्त्री-पुरुषों का आकुल-क्रंदन उनके जीवन का सर्वप्रथम दुखद संस्मरण है जो आज भी कभी-कभी उनके कानों में दुखद झंकार में बज उठता है।

उनका शिक्षण पाँच-छः वर्ष की अल्पायु में ही देहाती संसार के सुमधुर सुखद वातावरण में अपने ही जैसे कुछ अन्य बच्चों के साथ

प्रारम्भ हुआ। उस काल का देहाती जीवन आज से अधिक सहज स्वाभाविक था।

समीप-समीप के दो गाँवों, जीरादेई तथा जामापुर की ऊँच-नीच जातियों तथा विभिन्न मतावलंबियों की प्राय: एक एक सहस्र मिली-जुली संख्या की बस्ती थी। जिसके हरे-भरे खेतों में श्रमिक जीवन की हलचल से भरा देहाती जीवन खेलता था। ग्रामीणों के क्रय-विक्रय के लिये कुंजड़े, हलवाई तथा बजाज की दुकानों पर एकत्रित होना उतना ही सहज था जितना फेरीवाले, पुस्तक विक्रेता तथा फलवाले का गाँव में में आना जो अपनी ताजी नारंगियों अथवा रूई में लिपटे टिपारियों में बन्द अंगूरों के कारण एक विशेष आकर्षण था और जिसके पास मूल्यवान् मधुरता प्राप्त करने के लिये ललचाई आँखों से बच्चे जुट जाया करते थे।

बहुसंख्यक आबादी के नाते जीरादेई राजपूतों का गाँव कहा जा सकता है। कायस्थों के केवल पाँच घर थे—तीन बाबू के स्ववंशियों के तथा दो निकटतम सम्बन्धियों के।

बाबू की शिक्षा फ़ारसी वर्ण-माला से एक ऐसे मौलवी की अध्यापन-संरक्षण में प्रारम्भ हुई जिसको आत्मश्लाघा की भावना और बारूदी बंदूकें चलाने की दक्षता का खोखला दर्प, उस दिन से जिस दिन वह बंदूक के धक्के से गिरकर अचेत हो गया और घंटों गये सचेत हुआ, उसके शिष्यों के लिये हँसी का साधन बन गया था।

उनकी अंग्रेजी शिक्षा का क्रम जो छपरा से प्रारम्भ हुआ निरन्तर स्थान परिवर्तन के इतिहास से भरा है। वे छपरा से पटना, अथवा

और पुनः छपरा के स्कूलों में बदलते रहे—जहाँ आकर अन्त में उन्होंने उत्तीर्ण परीक्षार्थियों में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त कर एन्ट्रेन्स परीक्षा पास की। विश्वविद्यालय के इतिहास में यह सर्वप्रथम अवसर था जब एक बिहारी विद्यार्थी यह सम्मान प्राप्त कर सका। उनकी यह सफलता न केवल उनके माता-पिता को प्रसन्नता, मुख्याध्यापक के आनन्द तथा सबंधियों के गौरव का कारण बनी अपितु वह समस्त बिहार प्रांत के लिये एक सम्मान थी।

प्रेसीडैंसी कॉलेज कलकत्ता में प्रवेश के साथ-साथ उनका कॉलेज जीवन प्रारम्भ हुआ। ऐफ० ए० और बी० ए० की परीक्षा में उन्होंने सदा की भाँति प्रथम स्थान प्राप्त कर अपनी बौद्धिक प्रतिभा का पूर्ण परिचय दिया जो भविष्य में उच्च कोटि के बौद्धिक विकास की सम्भावना सूचित करता था। एम० ए० तथा कानून की परीक्षाओं में अपने सर्वोच्च स्थान से उतरकर केवल प्रथम श्रेणी ही प्राप्त कर सके। किंतु इस कमी को उन्होंने कानून की दूसरी एम. ऐल. परीक्षा में सर्व-प्रथम आकर पुनः पूर्ण कर लिया।

उनके सार्वजनिक जीवन का प्रारम्भ कॉलेज में 'डॉन-सोसाइटी' की सदस्यता से हुआ। यह सोसाइटी अपने सदस्यों को नैतिक एवम् सामाजिक शिक्षण द्वारा स्वदेश-सेवा के लिये तत्पर करती थी।

डॉन सोसाइटी का उद्देश्य लेकर बाबू की प्रेरणा तथा अन्य विद्यार्थियों के सहयोग से प्रथम बिहार विद्यार्थी सम्मेलन पटना में आयोजित हुआ यह प्रथम संगठन था जिसके समकक्ष का अन्य कोई संगठन इसके पूर्व नहीं था। यह १९०६ से १९२० तक निरन्तर

अपने वार्षिक अधिवेशन आयोजित करता रहा। जिनका सभापतित्व श्री हसन इमाम और श्री सच्चिदानन्दसिंह जैसे प्रमुख विहारी नेता तथा महात्मा गांधी और श्रीमती एनीबेसेण्ट जैसे महान देश-भक्तों ने किया।

इस प्रकार उनका कालिज जीवन ही राजनैतिक और सामाजिक सेवा के सार्वजनिक जीवन का प्रारम्भ था। यह बीजारोपण और वृद्धि का समय था जो भविष्य में सन्तोषजनक फलदायक सिद्ध हुआ। इस युग में बहुत से अमूल्य सम्पर्क स्थापित हुए। यही उन्हें सर्वश्रेष्ठ भारतीय नायक महात्मा गांधी के समक्ष लाया।

कालिज की बड़ी सफलताओं के साथ जीवन में उन्हें छोटी-छोटी असफलताएँ भी मिलीं। वे एम० ए० और बी० एल० परीक्षाओं में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त न कर सके। उनकी वह आशा जो गहरी निराशा में परिणत हुई थी वह उनके विदेश जाकर विद्याध्ययन की पूर्णचेष्टा करते हुए भी विफलता थी।

घरेलू अवस्था में उत्पन्न मन की दुर्बलता के कारण बाबू का "सर्वेन्ट ओफ इन्डिया सोसायटी में शामिल होने का विफल प्रयास पश्चाताप का कारण न होकर खेद का कारण माना जा सकता है।

उनके पिता की मृत्यु जो कम गहरा आघात नहीं थी उनके कालिज जीवन की समाप्ति के साथ हुई थी।

कालिज जीवन के संस्मरण प्रसन्नता तथा आनन्द से परिपूर्ण है। खेद है कि इस काल के सभी सम्भावित लाभ नहीं उठाये जा सके। उनके भाई ने उनके पथ-प्रदर्शक का काम किया। उनके जीवन के सभी भले तत्वों का बीजारोपण, विद्यार्थी जीवन की सभी सुविधायें

उन्हें अपने भाई द्वारा प्राप्त हुई और अध्ययन में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होने दी।

स्कूल और कॉलेज दोनों में ही अध्यापकों तथा मित्रों से इनका सम्बन्ध प्रेम-मय रहा। जहाँ तक है किसी प्रकार की कटुता, झगड़ा अथवा विरोध नहीं था अपितु उनके सम्पर्क स्नेह से पूर्ण थे। इसी युग में ऐसी मित्रताओं की नींव पड़ी जो आज तक अटूट है।

यद्यपि स्पर्धामय प्रतियोगिता अध्ययन के क्षेत्र में बनी रही किन्तु इसमें किसी भी प्रकार की दुर्भावना अथवा बुराई की भावना नहीं थी। क्षोभ का कभी कोई अवसर नहीं आया। पारस्परिक सहायता सदैव प्राप्य रही। संक्षिप्त में कहा जा सकता है कि प्रतियोगिता और सहायता की भावना ही प्रमुख थी।

बाबू को किसी भी प्रकार किसी ऐसी घटना का स्मरण नहीं होता जिसमें उन्होंने प्रान्तीयता को कोई श्रेय दिया हो, वैसे कांग्रेस के प्रधान के नाते देश की भलाई के लिए उन्हें कुछ ऐसे कार्य करने पड़े हैं जिन्हें बंगाली अपेक्षाकृत प्रान्तीय दृष्टिकोण से देख सकते हैं किन्तु इन कार्यों के कारण उनके बंगाली मित्रों के सम्बन्धों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा न इन्होंने विद्यार्थी जीवन के कलकत्ता प्रवास काल के पन्द्रह वर्षों की सुमधुर स्मृतियों पर ही कोई अहितकर प्रभाव डाला।

उनके बिहारी मित्र भी कम नहीं हैं बिहारी मित्रों की सूची में से श्री अवधेष बाबू की मित्रता परम हितकर सिद्ध हुई है। और इसे वैवाहिक सम्बन्धों द्वारा सबल बना दिया गया है।

बाबू ने अपना जीवन मुजफ्फरपुर कॉलेज के प्रोफेसर के रूप में

प्रारम्भ किया। दस महीनों के पश्चात् वे पुनः कानून की परीक्षा देने कलकत्ता चले गये। इस डिग्री के लिए उन्हें दो साल तक किसी की संरक्षिता में कार्य सीखना था। कुछ समय तक खान बहादुर शमशुलहुदा के कहने पर उन्होंने जस्टिस रहीम जाहिद के साथ कार्य किया और साथ ही साथ कुछ समय तक सिटी-कालिज में प्रोफेसर के रूप में कार्य करते रहे। जस्टिस दिगम्बर चटर्जी के पुत्र के गृह-शिक्षक भी रहे। स्थान रिक्त होने पर खानबहादुर शमशुलहुदा ने बाबू को अपनी संरक्षता में ले लिया।

बी० एल० परीक्षा पास करने के पश्चात् खानबहादुर साहब के नेतृत्व में उन्होंने अपना निजी कार्य प्रारम्भ कर दिया। थोड़े दिनों पश्चात् ही खान साहब कलकत्ता हाईकोर्ट के न्यायाधीश नियुक्त हुए और उनके सभी मामले बाबू के पास आने लगे। उनमें से एक सफल वकालत ने कलकत्ता यूनिवर्सिटी के उपकुलपति सर आशुतोष मुकर्जी का ध्यान आकर्षित किया था और उन्होंने बाबू को प्रेसीडेन्सी कॉलिज में प्रोफेसर नियुक्त करा दिया।

वकील के रूप में बाबू को प्रारम्भ से ही सफलता मिली। रास-बिहारी घोष के विरुद्ध उन्होंने एक केस अवश्य जीत लिया किन्तु उस प्रसिद्ध वकील के साथ कार्य करने का सुअवसर कभी नहीं मिला। अन्त में जब डाक्टर सिन्हा के विरुद्ध उनके साथ कार्य करने का अवसर मिला बाबू ने अपने विरोधी-दल की दलीलों के नोट्स लेने की योग्यता और कार्य क्षमता से उस प्रसिद्ध वकील की प्रशंसा प्राप्त कर ली और उनकी Revision appeals न्यायाधीशों द्वारा

निस्सन्देह स्वीकार करली जाती थी । इस प्रकार बाबू ने अपनी वकालत में आर्थिक सहायता प्राप्त की और जब सन् १९१६ में पटना हाईकोर्ट की स्थापना हुई तो बाबू कलकत्ता छोड़कर वहीं चले आये।

बाबू ने प्रमुख भारतीय वकीलों की ही प्रशंसा प्राप्त नहीं की अपितु जब वे डुमराँव राज्य के मामले में जो हरीजी के विरुद्ध था प्रतिनिधि होकर इग्लैंड की प्रिवी कौंसिल में गये तो अपनी नोट्स लेने की असाधारण योग्यता के लिए उन्होंने मिस्टर अपजॉन से प्रशंसा प्राप्त की।

उनके राजनैतिक जीवन का इतिहास भारतीय राजनीति में महात्मा गांधी के प्रवेश से लेकर कांग्रेस का इतिहास है।

यह एक तीस वर्ष का अद्भुत घटनाओं से भरा नाटकीय रोचकता से ओत-प्रोत, महान त्याग और दुखों से पूर्ण करुण और वीर रस से प्लावित; तूफानी दौरों; क्रान्तिकारी यात्राओं; भूख और प्यास; प्रहारों और आघातों; लाठीप्रहारों और संगीनों; कैद और पीड़ा से भरा जीवन है। संक्षिप्त में इसे रक्त-परिश्रम; हासरुदन और मृत्यु का जीवन कहा जा सकता है।

कांग्रेस के स्वयंसेवक के रूप में बाबू ने अपना राजनैतिक जीवन प्रारम्भ किया। स्वतन्त्रता के महान वीर के साथ-साथ उन्होंने युद्ध की भयंकरता का सामना किया है। बापू का कोई भी कार्य ऐसा नहीं है जिसमें बाबू का कोई हाथ न हो। सन् १९३२ में उन्हें जेल जीवन का प्रथम परिचय हुआ और उन्होंने उसे सहज स्वाभाविक ढंग से अपना लिया। एक बार जेल की चहारदीवारी में बन्द होने पर बाहरी

दुनिया से सभी सम्पर्क तोड़ लेने का उनका स्वभाव था।

१६३२ से १६४२ तक का उनका राजनैतिक जीवन जेलयात्राओं और बीमारियों से भरा है। वे भयहीन साहस से जेल जाने के लिए तत्पर रहते थे। उस महान संचालक की आज्ञा पर उन्होंने व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग नहीं लिया। बापू के शब्दों में उस समय जेल जाना सरकार पर उनके अस्वस्थ शरीर का भार फैंकना था और इसलिए वह अहिंसा धर्म के विरुद्ध था।

उनका जेल-जीवन छपरा जेल से प्रारम्भ हुआ और सन् १६४२ के तूफानी दिनों से लेकर सन् १६४५ तारीख १४ जून की संध्या का बाँकीपुर जेल में समाप्त हुआ।

राजनैतिक सेवाओं के समान ही उनकी सामाजिक सेवाएँ भी निस्सन्देह महान हैं। 'हरिजन-उद्धार' अस्पृश्यता की समाप्ति साम्प्रदायिक संतुलन बनाये रखना उनकी निरन्तर की चिन्तायें रही हैं।

विहार भूकम्प और बाढ़ से पीड़ितों की सेवा उनके जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य रहा है और इसके लिए उन्हें समुचित श्रेय भी मिला है।

उनकी शिक्षा-सम्बन्धी सेवायें भी किसी अंश में कम नहीं हैं उनकी प्रेरणा पर ही बनारस में सर्वप्रथम अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन की संयोजना हुई। वे कुछ दिनों तक विहार विद्या-पीठ के आचार्य भी रहे हैं। वे महात्मा गांधी की धारणा पर राष्ट्र-भाषा के विकास की संस्था हिन्दुस्तान एकेडेमी के अध्यक्ष हैं। वे

भारतीय एतिहासिक एकेडेमी के प्रधान भी हैं। इस पर शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं के लिए उन्होंने कुछ कम कार्य नहीं किया है।

पत्रकार के रूप में बाबू साप्ताहिक देश तथा दैनिक सर्च लाइट ने १६२० से १६४२ तक महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय सेवा की और उसके पश्चात उसका संचालन बिड़ला बन्धुओं के हाथों में चला गया।

व्यस्त सामाजिक और राजनैतिक जीवन में देश विदेश की यात्राएँ और रुग्णशय्या ही एकमात्र विश्राम कहे जा सकते हैं। यदि उन्हें किसी भी अर्थ में इस रूप में अपनाया जा सके।

कुछ ऐसा ही व्यस्त जीवन हमारे बाबू का रहा है जिसकी तुलना में चींटी और मधु-मक्खियों के श्रमरत जीवन की लोकोक्ति तुच्छ होकर बाबू के अनवरत, अथक परिश्रम के जीवन को अपना लोकोक्ति-गत श्रेय दे बैठती है।

: २ :

उनके व्यक्तित्व तथा चरित्र का चित्रण

हमारे बाबू सज्जन और महान् व्यक्ति हैं। उनके व्यक्तित्व की सुन्दरता ही उनके वर्तमान महान् उत्कर्ष में सहायक हुई है।

शारीरिक गठन लम्बा होते हुए भी उनका बाह्य व्यक्तित्व विशेष आकर्षक नहीं है और सहसा उनके महान् व्यक्तित्व की मानसिक प्रतिभा और नैतिक स्तर का परिचय नहीं दे पाता।

उनके विशाल भाल, प्रशस्त ललाट एवम् निश्छल आनन अपने में उनके मस्तिष्क की उच्चता विचारों की उदारता और स्वभाव की निश्छलता छिपाये हैं।

उनकी गहरी बैठी हुई आँखें, उनकी प्रखर अन्तर्दृष्टि तथा दूर-दर्शिता की परिचायिका हैं।

उनके वृषभ-स्कन्ध उनके चरित्र के गाम्भीर्य का भार वहन करने में सर्वथा समर्थ हैं।

उनका प्रशस्त-वक्षस्थल अपने सौहाद्र मन एवं सम्वेदनशील आत्मा लिए हैं।

उनकी आजानु बाहुओं तथा मुक्त करों की मनुष्यों तथा समस्याओं के विषय में दूर तक पहुँच है, उनकी पकड़ सबल है।

उनके शरीर को ऊँचाई प्रदान करने वाली लम्बी टाँगें, उनकी सबलता को सहज गति देती हैं।

उनके रहस्यमय व्यक्तित्व की अगम्य चारित्रिकता, उनके महान् विद्वान, लेखक, संगठनदक्ष, व्यवस्थापक तथा सभाकुशल व्यक्ति होने की मूकसाक्षी हैं।

कला और विज्ञान के विभिन्न विषयों का उन्हें अच्छा ज्ञान है। वे अध्ययनशील विद्वान हैं। उन्होंने संस्कृत, इंग्लिश, फारसी, हिन्दी तथा उर्दू की शिक्षा पाई है और उनके सूक्ष्म तत्त्वों में प्रविष्ट होने की सहज बुद्धि प्राप्त की है।

वे प्रभावशाली लेखक हैं। उनकी अभिव्यक्ति स्पष्ट एवं सरल है। उनकी दो पुस्तकें, 'आत्मकथा' तथा "विभाजित-भारत" उनकी विद्वता और विस्तृत विवरण प्रवृत्ति की परिचायक हैं।

वे आकर्षक वक्ता हैं और घन्टों जनता को प्रभावित रख सकते हैं। उनका अँगरेजी, हिन्दी और हिन्दुस्तानी पर पूर्ण अधिकार है। वे इनमें पूर्ण सुयोग्यता से व्याख्यान दे सकते हैं। अभिव्यंजना की स्पष्टता, सुलझे विचार, संयत ढंग, शान्तमुद्रा तथा समुचित धारा-प्रवाह उनके भाषण की विशेषतायें हैं।

संगठन-कर्ता के रूप में विवरण प्राप्त कर प्रत्येक दिशा से पूर्ण योजना बनाकर सुयोग्यता से उनका संचालन करना ही उनका स्वभाव बन गया है।

अपनी कर्मशक्ति तथा योग्यता के नाते वे सामयिक परीक्षाओं द्वारा अपने को एक योग्य व्यवस्थापक सिद्ध कर चुके हैं। उनकी

प्रसन्न-चित्तता, क्षमा दानशक्ति, कार्यदक्षता, प्रश्रयात्मक प्रवृत्ति तथा उदारता ने उन्हें उनके सहयोगियों व आधीनस्थ कार्यकर्त्ताओं की प्रशंसा तथा जनता की सद्भावना प्राप्त की है।

वकील के रूप में उन्हें तत्कालिक आर्थिक सफलता प्राप्त हुई। उनकी कानूनी समीक्षायें पूर्णतया शुद्ध तथा अपने में सम्पूर्ण होती थीं। वे उतने ही सफल, सुयोग्य तर्क द्वारा अपने साथियों, अफ़सरों तथा निर्णायकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर सकते थे। उनका हिन्दुओं के शाश्वत धर्म, धार्मिक रीति-रिवाजों, पौराणिक गाथाओं तथा कर्म-कारण्ड में संयत सुधारक की भावना से पूर्ण श्रद्धा-मय गहन विश्वास है।

शैशव से ही अपनी माँ की उषाकाल की प्रार्थना सुनना तथा रात्रि में पौराणिक गाथाओं की सम्मोहक सजीवता से प्रेरित मधुर निद्रा में निमग्न होना उन्हें धार्मिक क्षेत्र में प्रविष्ट कर चुका था।

धार्मिक त्यौहार तथा उनसे सम्बन्धित 'पौराणिक पुरुष'—गाथाओं का विवेचन, धर्म-ग्रन्थों का मनन तथा गांधीजी का सम्पर्क—उनके धार्मिक विश्वास के निरन्तर सबल होने में सहायक रहे हैं। यही ईश्वर तथा नियति में उनके अटूट विश्वास तथा श्रद्धा का कारण बने हैं। प्रत्येक घटना और कार्य के परोक्ष में आज वे उस सर्व-शक्तिमान परमेश्वर का सुदृढ़ हाथ देखते हैं।

जीवन पर उनके नैतिक दृष्टिकोण ने शनैः शनैः उन्हें मनुष्यमात्र के सेवक के पद से उठाकर राज्य के अध्यक्ष-पद पर आरूढ़ कर दिया है।

सुधारक के नाते वे सदैव ही दरिद्रों, दुर्बलों, पीड़ितों तथा पद-दलितों के मित्र हैं। विधवा युवतियों के पुनर्विवाह हरिजनों के उत्थान तथा अस्पृश्यता के अभिशाप मोचन को उन्होंने सदैव ही प्रोत्साहन दिया है।

अपनी अतिशय संवेदन शीलता के कारण वे दूसरों की कठिनाइयों तथा आपत्तियों में योग देने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं और उस दशा में कोई भी दुःख और त्याग उनके लिए महत्व नहीं रखता।

उनमें एक विशिष्ट प्रवृत्ति है—निजी तटस्थता जिसके कारण नये आदमी तथा नये विचार उनमें कोई भाव परिवर्तन नहीं कर सकते।

उनमें एक खिलाड़ी का संयम है जो उन्हें शैशव के खेलकूद से भविष्य के युद्धस्थलों में परीक्षण के लिए मिला। उनकी इसी अनासक्ति भावना ने उन्हें जीवन के कठोर प्रहारों को मूक रहकर सहना सिखाया है।

ऐसा ही सुन्दर और महान् चरित्र हमारे बाबू का है जिसके बल पर उन्हें सर्वोच्च-स्थान, जिसे एक देश की जनता देश के सच्चे सेवक को दे सकती थी, मिला है।

: ३ :

महान एवं स्मरणीय सम्पर्क और घटनायें

घरेलू जीवन के सम्बन्धों तथा विद्यार्थी और वकील जीवन के मधुर सम्पर्कों के अतिरिक्त भी उनके सार्वजनिक जीवन में असंख्य सम्पर्क हुए हैं।

वे अपने माता-पिता के प्रिय शिशु दादी के गुड्डा तथा काका दादा के खिलौने और अपनी मां के पुच्छल्ला थे। वे पिता के प्रेम के केन्द्र थे। उनके पिता ही उनके व्यायाम तथा घुड़सवारी के शिक्षक थे। उनके काका-दादा की तोंद उनकी शिशु सुलभ चंचलता का क्रीड़ा स्थल थी।

बाबू अपने बड़े भाई को पिता तुल्य समझते थे। ये साभार स्वीकार करते हैं कि वे जो कुछ आज हैं वह सब उनके ज्येष्ठ भ्राता तथा महात्मा गांधी की देन है।

व्यवधान रहित सार्वजनिक जीवन के लिए यदि वे अपने बड़े भाई के आभारी हैं तो राजनैतिक नेतृत्व तथा नैतिक प्रेरणा के लिए महात्मा गान्धी के और इस प्रकार अपनी सम्पूर्णता के लिए दोनों में से किसी न किसी के किसी न किसी अंश में आभारी हैं। वे प्रसन्न मुख से स्वीकार करते हैं कि उनके जीवन में उनका अपना कुछ भी नहीं है।

विद्यालय जीवन की एक और मधुर श्रद्धामय स्मृति छपरा स्कूल के हैडमास्टर श्री रसिक बाबू की है। रसिक बाबू एन्ट्रेंस परीक्षा में उनके प्रथम स्थान प्राप्ति के भविष्य वक्ता थे। वे बाबू के शिक्षक ही नहीं अपितु-नैतिक गुरु भी थे जिन्होंने बाबू के प्रारम्भिक चरित्र-गठन को सुदृढ़ बनाया था।

डाक्टर जगदीश बोस और डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र राय जिन्होंने प्रोफेसर के रूप में बाबू की बौद्धिक प्रतिभा के कारण स्नेह किया था उनके जीवन की महान् और अमूल्य स्मृतियाँ हैं।

समकालीन देश भक्तों तथा जन सेवकों के विचित्र समुदाय में से डाक्टर सच्चिदानंद सिन्हा मजरुलहक साहिब और ब्रज किशोर बाबू ऐसे व्यक्ति हैं जिनका स्मरण बाबू श्रद्धामय प्रेम से करते हैं। बाबू को ब्रज-किशोर बाबू ने अपने निजी उदाहरण द्वारा देश की चिरन्तन सेवा में जीवन समर्पित करने की प्रेरणा दी।

उनके जीवन के तीन महत्वपूर्ण सम्पर्कों में से एक महान देश-भक्त राजनैतिक गोखले का है। गोखले पूना की सर्वेन्टस आफः इंडिया सोसायटी' के संस्थापक थे। बाबू के मिलने के पूर्व ही गोखले उनकी प्रतीभा के विषय में सुन चुके थे। उस सम्मानित व्यक्ति ने प्राय दो घन्टे तक बाबू के सहज-प्रभावित मस्तिष्क को करुण स्वर में बतलाया कि किस प्रकार इने-गिने पुत्रों पर देश सेवा देश का कितना अधिकार है।

गोखले की प्रेरक वार्ता ने बाबू के मस्तिष्क पर इतना प्रभाव डाला कि 'वे सर्वेन्ट्स आफ इंडिया सोसाइटी' के सदस्य बनने के प्रश्न पर

सोचने के लिए कितनी रातें आँखों में बिताईं। उनकी भूख प्यास मारी गई और उनके समक्ष केवल अपनी सदस्यता का प्रश्न था।

यह अनिश्चय की दशा अधिक दिन न चल सकी। यह प्रश्न उस समय उपस्थित हुआ जब उनके बड़े भाई भी कलकत्ता के इडन होस्टल में थे। भाई के सामने तो चर्चा करने का साहस बाबू का नहीं हुआ किन्तु अपने मन की बात कागज के टुकड़े पर लिखकर और उनके नीचे रख आप कालिज चले गये।

बाबू की भावना जानकर उनके बड़े भाई को गहरी ठेस लगी और वे अपने आँसू न रोक सके। वे बाबू को लेकर माँ से बातें करने जीरादेई आये। अतिशय प्रेम के कारण उनकी माँ तो शान्त रहीं किन्तु उनकी बड़ी बहिन ने जो जबान की जरा कड़ी हैं पहिले तो विदेश जाकर अध्ययन की बात कहकर पिता को दुखी करने तथा अब सर्वेन्टस आफ इंडिया सोसायटी के सदस्य होकर साधु जीवन बिताने की बात कहकर भाई को दुखी करने पर उन्हें भला बुरा कहा और ऐसा कहकर वे स्वयं रो दीं। यह बाबू के लिए काफी था और वह दृढ़ता जो कलकत्ते में ही अंशतः शिथिल हो चली थी अब पूर्णतः विलीन हो गई।

यह एक ऐसी स्मरणीय घटना है जिसपर बाबू संतोष और क्षोभ की मिश्रित भावना से सोच सकते हैं।

उनके जीवन में सबसे महत्त्वपूर्ण सम्पर्क महात्मा गांधी का है। यह १९१६ ई० की बात है और यही राष्ट्रपिता के तथा राष्ट्र के सच्चे सेवक के रूप में राजनैतिक क्षेत्र में उनका प्रवेश कहा जा सकता है।

बापू का सम्पर्क ही बाबू के व्यक्तित्व तथा चरित्र गठन में एक प्रमुख प्रभाव रहा है। यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि बाबू बापू के हाथों ही निर्मित प्रतिमा हैं।

बापू ने जब चम्पारन जिले के नील के पीड़ित खेतिहारों की दशा के लिये आवाज़ उठाई तो बाबू ही उनके प्रथम सहयोगी थे। इस असहयोग आन्दोलन का अन्त तनखतिया की क्रूर प्रणाली के अन्त से हुआ। साहित्यिक भाषा में इसे बिहार के उज्ज्वल आनन से नील के भद्दे अमिट धब्बे का प्रक्षालन कहा जा सकता है।

प्रायः जैसा वे स्वयं कहा करते हैं, बापू की राजनैतिक अन्तर्दृष्टि में बाबू का गहन विश्वास था। बापू के सम्पर्क ने उनमें देश-सेवा की नई भावना भरदी जिसने उनके जीवन के ढंग को पूर्णतः बदल डाला।

बापू ने राजनैतिक स्वाधीनता को एक नई दिशा और नया महत्व दिया जिसने स्वाधीनता के जन्म सिद्ध अधिकार के प्रति बाबू के मन में प्रबल सजगता जाग्रत करदी।

बापू के शान्तिमय राज्य क्रान्ति के विचार ने बाबू के मन पर गहरा प्रभाव डाला और राष्ट्रीय संघर्ष के माप दंड सत्य, अहिंसा के सिद्धान्त उनके जीवन में चिरस्थाई बनने के लिये मिले। बापू के प्रभाव ने वह चमत्कार किया जिसके कारण कभी के दुर्बल बाबू ऐसे सबल और शक्तिशाली बन गये कि आज वे राष्ट्र की जनता की शक्ति के आधार स्तम्भ हैं।

बापू के साँचे में ढलकर बाबू मनुष्य ही नहीं अपितु जननायक

बने हैं। महात्मा गांधी के सम्पर्क ने उनके व्यक्तित्व और चरित्र पर ऐसे स्पष्ट अमिट चिन्ह छोड़े हैं, कि जब सिद्धान्तों के दर्पण में देखा जाय तो वे अपने गुरु के प्रतिविम्ब से ही प्रतीत होते हैं।

बापू के सम्पर्क के अतिरिक्त अन्य महत्त्वपूर्ण सम्पर्क श्री जमनालाल बजाज का है।

बापू के बड़े भाई की मृत्यु पर सेठजी ने उनका स्थान ग्रहणकर अपने स्नेह और प्रेम से बाबू को उनकी उस महान हानि को भुला देने में सहायता दी।

कठिनाई के समय सेठजी ने बाबू की एक स्वाभाविक परोपकारी की भाँति ही सेवा की है।

भाई की मृत्यु पर बाबू ने अपने आपको भारी ऋण से दबा पाया भाई की मृत्यु बम्बई में होने वाले कांग्रेस अधिवेशन के वर्ष १६३४ में हुई। बिहार भूकम्प में उनके द्वारा की गई महान सेवा ने बाबू के लिए जनता का प्रेम और सद्भावना प्राप्त करली थी। अस्तु उनकी सेवाओं के सम्मान स्वरूप उन्हें राष्ट्रपति चुना गया। बापू की भी यही इच्छा थी।

ऋण के बोझ और भाई की मृत्यु के दुहरे प्रहार के कारण वे कांग्रेस के प्रधान पद के उत्तरदायित्व का भार सम्हाल सकने में असमर्थ थे।

सेठ जमनालाल बजाज के आश्वासन पर ऋण से निश्चिन्त रहने का गांधीजी का संदेश महादेव भाई ने उन्हें दिया जिसमें जोर दिया गया था कि वे बिहार भूकम्प में की गई अपनी सेवा के सम्मान

स्वरूप प्राप्त बम्बई कांग्रेस के प्रधान पद को स्वीकार कर लें।

ऋण की कहानी लम्बी और उलझी हुई है। बहुत सा भाग सेठ जी को देना था उसके भुगतान का भार उन पर रहा। ऋण का कुछ अंश भुगता दिया गया और कुछ शेष रहा किन्तु सम्मान-रक्षा हो गई और यह सब सारी जमींदारी के विक्रय द्वारा सम्भव हुआ।

सन् १६४२ में श्री जमनालाल बजाज की आकस्मिक मृत्यु ने बाबू को गहरा धक्का दिया और इस प्रकार वे फिर एक बार एक ऐसे भाई और मित्र की स्नेहमयी छाया से वंचित हो गये जिसकी पुण्यस्मृति चिर आभार और बन्धुत्व के अमर स्नेह से ओतः प्रोत रहेगी।

बाबू की आत्मकथा बहुत सी ऐसी महत्त्वपूर्ण घटनाओं से परिपूर्ण हैं जो कि उनके जीवन के सुखद संस्मरण माने जा सकते हैं। उनमें से यहां पर हम केवल दो ही घटनाओं का उल्लेख करते हैं। जिनसे मानव जीवन की विवेचना ज्योतिष के आधार और विचित्र तथा अप्राकृतिक अवस्था में विश्वास का आधार देती है।

पहली स्मरणीय घटना एक वयो वृद्ध ज्योतिषी की भविष्यवाणी है जिसे कि पहले बापू व उनके मित्रों ने पागल का प्रलाप समझकर उपहास कर दिया था। उनका ज्योतिषी से एकमात्र प्रश्न यही था कि क्या उनकी विदेश यात्रा सफल होगी? ज्योतिषी ने बाबू से जो कि विदेश जाने की तैयारियां कर चुके थे कहा—"तुम्हारी यह यात्रा कुछ समय के लिये स्थागित हो जायेगी किन्तु पूर्ण अवश्य होगी।"

सुखदेव से जिसका कि विचार अभी विलायत जाने का बिलकुल नहीं था कहा कि—"तुम्हारा स्वप्न सत्य होगा।" तीसरे से उसने यह

कहा कि "तुम्हारी इच्छा कुछ समय पश्चात् पूर्ण होगी।" और चौथे से तो नकारात्मक रूप से यह कह दिया कि "तुम्हारे जीवन में तुम्हारी यही अभिलाषा कभी भी पूर्ण न हो सकेगी।" कुछ समय पश्चात् जबकि बापू अपने स्थान पर लौट कर आये तो उन्हें एक तार मिला जिसके कारण उन्हें अपनी विदेश यात्रा उस समय स्थगित करनी पड़ी और सुखदेव का विचार एक दम विदेश जाने का हो गया। बाबू की तैयारियां सुखदेव के काम आई। वो बाबू के रुपये और वस्त्र लेकर विदेश गये। सुखदेव के जाने की बात इस भय से कि कहीं उसकी यात्रा भी बाबू की तरह असफल न हो जाय गुप्त उस समय तक रखी गई जब तक कि उस जहाज का लंगर न खुल गया जिससे सुखदेव रवाना हो रहे थे।

दूसरा संस्मरण उनके जीवन के अनुभव की एक विचित्र घटना है। एक काँग्रेस कार्यकर्त्ता की मृत्यु पर उसकी विधवा पत्नी रामसूर्ति जो कि प्राचीन परिपाटी के अनुसार सती होना चाहती थी किसी तरह उसको सती होने से रोककर यह कहा गया। कि वह अपने घर के एकान्त में बैठकर भजन व पाठपूजा करे और वह उसी समय से अपना सारा समय भजन तथा पाठपूजा में व्यतीत करने लगी। एक दिन वह अपने उसी कमरे में अकेली मरी हुई पाई गई उसकी मृत्यु कौतूहलपूर्ण अवस्था में हुई थी। वह बैठी हुई थी। उसके एक हाथ में गीता और दूसरे हाथ से वह अपने शरीर का बोझ साधती हुई उसके बाल जबकि वहां पर अग्नि का लेशमात्र चिन्ह भी नहीं था अधजले उसकी पीठ पर पड़े थे। उसके शरीर को छूने पर यह जान

पड़ा कि वह एक मात्र भस्म की ढेरी बन गई है। बाबू ने उसके मृतक शरीर को अपनी आँखों से अपने कुटुम्बियों के साथ देखा था। यह एक वैसी ही सच्ची घटना है जिसकी सत्यता से प्राचीन ऋषियों की तरह जो कि योगाग्नि द्वारा प्राण त्याग करते थे विश्वास हो जाता है। रामसूर्ती की योगाग्नि द्वारा मृत्यु और उसका अन्तिम दर्शन बाबू के जीवन की पवित्र स्मृति है।

: ४ :

बापू के पद चिह्नों पर

क्या बापू उसी विशिष्टात्मा के अङ्ग हैं? क्या वे उसी महान् कल्पवृक्ष के मधुरतम फल हैं? क्या वे उन्हीं गुरुवार्य के अनुगामी हैं? क्या वे बापू के ही प्रतिबिम्ब हैं? इन जिज्ञासाओं में सन्निहित तत्व की झलक पाने के लिये हमें बापू के स्फटिक-व्यक्तित्व का आधार लेना होगा।

स्वयं बाबू ने अपनी आत्मकथा में कहीं कहा है कि उन्होंने जो कुछ भी पाया है या किया है वह सब दो व्यक्तियों की छत्रच्छाया का ही परिणाम है—प्रथम उनके बड़े भाई और दूसरे महात्मा गांधी।

प्रजातन्त्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति के रूप में उनकी वर्त्तमान राजनैतिक स्थित के विकास में महात्मा गांधी का कितना हाथ रहा है—यही हमें प्रयोजनीय है। हमें यही खोजना है कि किस सीमा तक महात्मा गांधी उनके धार्मिक एवम् नैतिक गठन के मापदण्ड हैं?

कुछ भी सही, माप के परिमाण का निश्चय कर लेना कुछ कठिन नहीं है। बाबू के राजनैतिक एवम् नैतिक व्यक्तित्व की अनुमति प्राप्त करने के लिये केवल उन्हें सत्य और अहिंसा के प्रतीक बापू की विचारधारा की कसौटी पर कसना होगा और राजनैतिक स्वाधीनता

के राष्ट्रीय संघर्ष तथा अन्य अनेक सामाजिक-राजनैतिक प्रवृत्तियों में उनका उस महान् अहिंसक योद्धा के साथ तत्पर सैनिक की भाँति कंधे से कंधा मिलाकर किये हुये उनके नैतिक अभियान का अनुसरण करना होगा।

उपरोक्त आधार पर यह निर्णय कर लेना अनुचित नहीं होगा कि बापू का परिचय ही बाबू का परिचय है। हमें यह भी ज्ञात है कि बापू एक ऐसे शान्तिवादी राजनैतिक क्रांतिकारी थे जिन्होंने अपनी विचारधारा को सत्य एवं अहिंसा की सुदृढ़ नींव पर सम्पूर्णतया आधारित किया। वे शान्ति स्थापना के लिये, स्वदेश को विदेशी शासन से मुक्त करने के लिये तथा विश्व में जनतन्त्र को सुरक्षित करने के लिये युद्ध को अनियमित अनाचार के रूप में निष्कासित करना चाहते थे। उनके प्रजातन्त्र का आदर्श, जिसकी स्थापना व विश्व के उदाहरणार्थ भारत में करना चाहते थे, रामराज्य है। उनका यही आदर्श राजनैतिक जीवन में अध्यात्म को सम्भावित कर दिखाने का एक प्रयोग था।

क्योंकि गांधीवादी विचारधारा के आधार स्तम्भ सत्य और अहिंसा ही हैं अतएव बाबू का जीवन बापू के सच्चे अनुगामी के रूप में इन्हीं सिद्धान्तों के अनुसरण में समर्पित हुआ है। सत्य का गांधीवादी निरूपण अपने समस्त सम्बन्धित अर्थों में एक निराला स्वरूप है जो कि ईश्वरीय सत्य है और अहिंसा इसी सत्य के परम ध्येय को प्राप्त करने का साधन है। साथ ही सत्य और अहिंसा एक ही वस्तु के दो पार्श्व हैं जिन्हें एक दूसरे से पृथक नहीं किया जा

सकता। अहिंसा के व्यवहार का अन्त सत्य के साक्ष्य में होता है और यही मनुष्य जीवन का चरम लक्ष्य है।

यद्यपि अन्य आदर्शों के समान अहिंसा का आदर्श भी व्यावहारिकता में मानव के लिये असाध्य है तथापि बाबू एक अहिंसक की सच्ची आत्मा अपने में समाविष्ट कर सके हैं और बापू के समान ही जीवन भर अपनी सम्पूर्ण शक्ति से इस आदर्श को एक सजीव व्यावहारिकता देने में रत रहे हैं। आत्मज्ञान के उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने आवश्यक स्वशासन का अपना ध्येय प्राप्त कर ही लिया है।

बापू के नैतिक वृक्ष की बाबू एक अहिंसक शाखा मात्र है। वृक्ष के मूल, स्तम्भ, वल्कल, पत्र एवम् कुसुमों के अन्तर के समान ही उनका अन्तर है। वही गांधीवादी रस बाबू की नैतिक शिराओं में अहिंसा के आकुल अनुसरण के लिये प्रवाहित हो रहा है। इस प्रकार यह शिष्य अपने उस महान् गुरु की सूक्ष्म अनुकृति है!

बापू के सम्पर्क में आने के समय से ही बाबू का जीवन सेवा में, अहिंसा धर्म द्वारा जो कि हिन्दू धर्म का मूल, उसका परम कर्तव्य एवम् नैसर्गिक नियम भी है, समर्पित हो गया है।

इसके अतिरिक्त, क्योंकि अहिंसा में आत्म त्याग और आत्म-पीड़न अनिवार्य है इसीलिये देश की तत्कालीन आवश्यकताओं एवम् अवसरों की माँग पर कोई भी बलिदान वीरात्मा बाबू के लिये कठिन नहीं है।

हम देख चुके हैं कि किस प्रकार कांग्रेस की अपूर्ण और सीमित

अहिंसक राजनीति बापू को उनकी शक्ति के शिखर तक ले आई है किन्तु अभी भी हमें इसी अहिंसा को उनके गुरुवर्य्य के महान् नैतिक मापदण्ड की सम्पूर्णता की सम्भावनाओं को युद्ध निष्कासन की सफलता एवम् देश-देश की जातियों का 'एक विश्व: एक राज्य' के संगठन के रूप में, देखना है।

जैसा कि प्रायः सोचा जाता है, अहिंसा का स्वरूप नकारात्मक न होकर शुद्ध स्वीकारात्मक है। यह अनासक्त भावमय पटुतर कार्य-क्षमता का सिद्धान्त है। आत्म मुक्ति के लिये अहिंसक संघर्ष नश्वर देह के अनवरत बलिदान के रूप में परिणित हो जाता है।

कोई माने या न माने, भारत ने अपनी स्वतन्त्रता अहिंसा से प्राप्त करली है। विदेशी सरकार से राज-सत्ता का हस्तांतरण शान्तिमय क्रान्ति के रूप में हुआ है। यह उसी महान् विभूति के जीवन काल में सम्पन्न हुआ और आज, जब वे हमारे बीच में नहीं हैं, किसी दिन का स्वप्न स्वतंत्र भारत एक जीवित सत्य है।

अहिंसक प्रणाली किस प्रकार पाश्चात्य समाज की हिंसक प्रणाली पर आधारित युद्ध का स्थान ग्रहण कर विश्व शान्ति स्थापना का अधिकतम प्रभावोत्पादक साधन बनाई जा सकती है—निरन्तर इसी समस्या का विचार बापू को प्रेय रहा है।

अहिंसा की सफलता में सन्निहित आवश्यक परिस्थितियाँ एवम् धारणायें बापू के शब्दों में इस प्रकार कही जा सकती हैं।

१. अहिंसा मानवता का धर्म है और पाशविक शक्ति से अत्य-धिक महान् और उत्कृष्ट है।

२. यह विश्व प्रेम की सत्ता में विश्वास न रखने वालों को अन्तिम निर्णय में सहायक सिद्ध नहीं हो सकती।

३. अहिंसा व्यक्ति के आत्म सम्मान और स्वाभिमान को पूर्णतः सुरक्षित रख सकने में समर्थ है किन्तु चलाचल शक्ति पर अधिकार बनाये रखने में सर्वदा ऐसा नहीं है यद्यपि स्वभावगत अभ्यास उसे सुरक्षित रखने में सशस्त्र सैनिकों की अपेक्षा अधिक सफल प्रमाणित होगा। अनुचित लाभ तथा अनैतिक कार्यों में, अहिंसा, उनकी दुष्प्रवृत्ति के कारण, किसी प्रकार भी सहायक नहीं हो सकती।

४. व्यक्ति अथवा राष्ट्रों को, जो अहिंसा पालन का निश्चय करें, अपने स्वाभिमान के अतिरिक्त सर्वस्व होम कर देने के लिये तत्पर रहना होगा। अतएव अहिंसा अन्य राष्ट्रों को उपनिवेश बनाकर रखने के प्रतिकूल है जैसे कि आधुनिक साम्राज्यवाद, जो अपनी रक्षा के लिये स्पष्टतया पाशविक बल पर निर्भर है, करता है।

५. अहिंसा एक ऐसी शक्ति है जिसे आबाल-वृद्ध सभी समान रूप से प्रयोग में ला सकते हैं बशर्ते कि वे प्रेम की सत्ता में पूर्ण विश्वास रखते हों अर्थात् मनुष्य-मात्र के प्रति समान प्रेम-भाव रखते हों। जब अहिंसा जीवन में धर्म के रूप में अपना ली जाय तो आवश्यक है कि हम अपनी सम्पूर्ण सत्ता में उसका प्रयोग करें, न कि किसी कार्य विशेष में ही।

६. व्यक्ति के अस्तित्व के लिये अहिंसा सर्वोत्तम साधन है किंतु समष्टि के लिये पर्याप्त नहीं है—ऐसा विचार एक महान् भूल है।

जिस प्रकार मनुष्य ईश्वर का अंश है उसी भाँति हमारे बापू भी

बापू के सत्य के ही एक अंग हैं।

अहिंसक व्यक्ति के लिये संयमी जीवन प्रारम्भिक दशा है। बापू के समान जिन्होंने जीवन में यौनिक निग्रह अपनाया था, बाबू का वैवाहिक जीवन भी संयमपूर्ण रहा है तथा पत्नी के साथ उनका सम्पर्क प्रायः पचास वर्ष रहकर भी पचास महीनों में नहीं गिना जा सकेगा। इस प्रकार बाबू की तुलना भगवावस्त्र विहीन संन्यासी से की जा सकती है।

बाबू सदैव मादक द्रव्यों से परे रहे हैं। उनकी यह प्रकृति उनके सहज स्वाभाविक नैतिक जीवन के स्वाभाविक विकास में सदा सहायक रही है।

बाबू का नैतिक गठन बापू की अहिंसा पर ही निर्मित और आधारित है।

अहिंसा बाबू के लिये दार्शनिक सिद्धान्त ही नहीं अपितु यह उनके जीवन का धर्म और प्राण रही है। यह उनके व्यक्तित्व का अविभाज्य अङ्ग है।

उनके विशुद्ध अहिंसक चरित्र में आत्म-विश्वास का बल है, जिसने उन्हें अहिंसा का सच्चा भक्त बना दिया है।

अहिंसा का ज्ञान सहज प्राप्य नहीं है और उस पर आचरण करना तो और भी कठिन है अस्तु उनकी विनय, उनके अपरिग्रह, सहनशीलता और असीम साहस के फल स्वरूप सच्चा मार्ग प्रदर्शन ईश्वर तथा बापू से सहज सुलभ हुआ है।

बाबू का अहिंसा पर अक्षय विश्वास है और उन्होंने अहिंसा को

एक संयत अवस्था का स्वरूप देकर उसे इस आदर्श के योग्य आचरण करने का साधन बना लिया है।

अहिंसा की कार्यप्रणाली रहस्यमय है। वापू के कार्य पूर्णतः अहिंसक होते हुये भी कभी-कभी हिंसात्मक प्रतीत होने लगते किन्तु वावू के कार्य इस दोप से भी सर्वथा मुक्त हैं। उनके अहिंसक कार्य भारतीय सतियों के उज्ज्वल चरित्र के समान संदेह से परे हैं।

वावू की अहिंसा का क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत है। यह उनके परिवारिक, राजकीय, आन्तरिक एवं वाह्य (आक्रमण अथवा संघर्षों) में व्यवहृत हैं।

वावू अपने आन्तरिक विश्वास से अहिंसक हैं। ईश्वर की सत्ता में विश्वास किये विना अहिंसा में विश्वास करना असम्भव है अस्तु अहिंसक व्यक्ति ईश्वर की कृपा के विना कुछ भी कर सकने में असमर्थ है।

वावू का महत्व स्वीकार करते हुये भी यह कहा जा सकता है कि वे सदैव ही अपने प्रत्येक कार्य में उस महान्-शक्ति के हाथों में एक साधन-मात्र रहे हैं।

उनका इस अहिंसा में, जो अपने विकास के लिये ईश्वर और उनकी प्रार्थना से प्रेरणा पाते रही, वापू के उज्ज्वलतर और ज्ञान प्रकाश और विवेचन द्वारा विश्वास गहन होता गया है।

वावू की अहिंसा में उनकी सुदृढ़ इच्छा शक्ति तथा अपने अधिकारों की प्राप्ति और कर्तव्यों की पूर्ति के लिये प्राप्त अपरिमित साहस का वल है।

अहिंसा और कायरता का साथ असंभव है इसीलिये बाबू ने समस्त भय विचार त्याग दिया है और अपने न्यायसंगत कार्यों की सफलता के लिये समस्त बुराई तथा अमानुषिकताओं के प्रति भयरहित विरोधाभास अपनाया है।

बाबू, जिन्होंने गांधीवादी विचार-धारा का संयम सीखा है, एक साहसी अहिंसक सैनिक हैं। उनका साहस हिंसक युद्धकौशल में शिक्षित सैनिक की भाँति शत्रु के भय से उत्पन्न नहीं है अपितु आत्म-नियंत्रण और संयम तथा एक जिज्ञासु के नैतिक विकास के लिये हिन्दू शास्त्रों द्वारा प्रणीत यम-नियमों की देन है।

बाबू, जिन्होंने अहिंसा को धार्मिक उत्साह से अपनाया है, सामाजिक, असमानताओं, साम्प्रदायिक विरोधों, आर्थिक अयोग्यताओं एवम् धार्मिक कट्टरताओं के विरोध में एक धर्म-बद्ध सैनिक हैं।

वे इस धर्म-युद्ध को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र और असमानता में ले गये हैं और वे अहिंसक युद्ध के उन समस्त शस्त्रास्त्रों—उदारता, सहनशीलता, मानवता, करुणा, न्याय तथा प्रेम—जिनमें शत्रु का भी हृदय परिवर्तित कर देने का सामर्थ्य है—से रत रहे हैं।

यह कोई आश्चर्य नहीं कि इन गुणों से विभूपित बाबू के लिये राग, द्वेष और घृणा से भरे इस संसार में भी शत्रु कहने-मात्र के लिये नहीं हैं। अतः उन्हें 'अजात शत्रु' कहना न्याय संगत ही है।

बाबू अपने अहिंसक हृदय की कोमलता में लोह सम दृढ़ इच्छा शक्ति लिये हैं जो टूटना जानती है किन्तु झुकना नहीं।

यदि बाबू के जीवन में सन्निहित अदृश्य आकर्षण तत्त्व को छोड़

दिया जाय तो शेष एक खुली पुस्तक है। अहिंसा ही उनके जीवन का एकमात्र रहस्य, सत्य ही एक मात्र नीति तथा प्रेम ही एकमात्र शस्त्र है।

इस प्रकार बापू का जीवन जो संघर्षमय संसार में भी सत्य एवं अहिंसा को समर्पित है अपने देशवासियों तथा अन्य देशवासियों के प्रति एक मात्र तथ्य सर्वशक्तिमान तथा प्रेम के द्वारा अपने सौभाग्य को पूर्ण करता है।

बापू के लिये सत्य और अहिंसा कोरे और निराकार भावात्मक सिद्धान्त नहीं हैं। उन्होंने उन्हें व्यावहारिक अर्थ और साकार स्वरूप दिया है।

कांग्रेस का रचनात्मक कार्यक्रम तथा अन्य अनेक समाज सेवा के कार्य, जो उच्चतम त्याग चाहते हैं और जिन्हें बापू सदैव ही सरल हृदय से करने के लिये तत्पर रहे हैं—उनके शान्तिमय कर्म के ज्वलंत संस्मरण हैं और वे मानवता के विशिष्ट समर्थकों के रूप में उनकी स्मृति अमर बनाये रहेंगे।

उनके अनेक सामाजिक तथा धार्मिक सुधार जिनका उद्देश्य युवती, विधवाओं, पददलितों और समाज से सताये हुये व्यक्तियों की दशा परिवर्तन था, मूलभूत सिद्धान्तों में सन्निहित सामाजिक भावनता पर आघात किये बिना सामाजिक सुधार के रूप में उनकी सच्चाई के उदाहरण हैं।

बापू के राजनैतिक आदर्श भी उनके अपने भी हैं। राजनैतिक स्वतन्त्रता तथा विश्व शान्ति के पथ पर वे सदैव ही बापू के अनुयायी रहे हैं।

बाबू, जो आज तक बापू के राजनैतिक भवन के एक पार्श्व विशेष के आधार थे आज प्रजातन्त्र भारत के विशाल वितान के एकमात्र आधार स्तम्भ हैं। हमारी यह शुभ कामना उचित ही होगी कि निकट भविष्य में एक दिन ऐसा भी हो जब वे 'एक विश्व समाज' की शांति में क़ीर्तिध्वज बन कर सुशोभित हों।

विश्व-शांति का सन्देश जो बड़े दिन के उपलक्ष्य में महात्मा गांधी की कुटिया से संसार के जन-साधारण को बाबू ने दिया था, पाठकों के हितार्थ आगे उद्धृत किया जाता है।

डा० राजेन्द्रप्रसाद ने कहा कि विश्व के लगभग १०० शान्तिवादियों की बैठक भारत में हो रही है और वह संसार में शान्ति स्थापना की महान समस्या पर विचार कर रहे हैं। ये शान्तिवादी ३४ देशों से आए हुए हैं लेकिन वे अपने राज्यों या सरकारों का प्रतिनिधित्व नहीं करते। इस सम्मेलन के सदस्य साधारण स्त्री और पुरुष हैं जो कि विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए हैं लेकिन जो शान्ति के लिए उत्सुक हैं। वे उस शान्ति के लिए उत्सुक हैं जिसका मतलब केवल युद्ध की अनुपस्थिति ही नहीं बल्कि सक्रिय शान्ति है जिसे व्यवहार में सदभावना कहा जा सकता है। वे उस शान्ति के इच्छुक हैं जिनके लिए उन्होंने अपने ही तरीकों में कार्य किया है तथा कष्ट उठाया है। वे संसार के साधारण स्त्री पुरुषों से यह अपील करते हैं कि वे युद्ध के कारणों की खोज करें तथा उनको दूर करने का प्रयत्न करें। युद्ध के कारण व्यक्तियों और राष्ट्रों की इच्छाओं और आकांक्षाओं में निहित है। दूसरों की इसी प्रकार की इच्छाओं और आकां-

च्छाओं के पूरा न होने से जो संघर्ष पैदा होता है उसके फलस्वरूप युद्ध की उत्पत्ति होती है। यदि राष्ट्र तथा उनकी जनता अपनी इच्छाओं को सीमा में रखे तो स्थायी शान्ति रह सकती है।

आधुनिक समय में मनुष्य प्रकृति पर जो विजय प्राप्त कर सका है उसके फलस्वरूप उसकी इच्छाएं और अधिक बढ़ गयी हैं। विश्व एक पीढ़ी में ही दो महायुद्ध देख सका है; प्रत्येक का उद्देश्य युद्ध को खत्म करना था लेकिन उसका फल घृणा तथा दूसरे युद्ध की तैयारी ही निकला।

जड़ की बातें

"गांधीजी ने मिट्टी को मिट्टी से धोने की, युद्ध को युद्ध से समाप्त करने की और घातक अस्त्रों की व्यर्थता को समझ लिया था। उन्होंने जड़ की बात को पकड़ा और समस्या को सुलझाना चाहा। व्यक्ति का जीवन सादा बनाकर, उसकी आवश्यकताओं को कम करके, सर्वत्र प्रेम और विश्वास जागृत करके उसे शान्ति का उचित माध्यम बनाकर उन्होंने मानव को निडर बनाना और ऐसा बनाना चाहा कि कोई उससे भी भय न खाए। इस ढंग के मानव के लिए उचित वातावरण तैयार करने में हमें अपना जीवन ही बदल देना चाहिए। जीवन एक संगठित इकाई है और मनुष्य तब तक शान्ति नहीं प्राप्त कर सकता जब तक वह युद्ध भड़काने वाला जीवन व्यतीत करता रहेगा। निस्सन्देह वातावरण मनुष्य को प्रभावित करते हैं, परन्तु यदि वह दृढ़व्रती ही हो और सीधा व कठिन मार्ग जिसे सभी महापुरुषों तथा पैगम्बरों ने सुझाया है पकड़े—वही मार्ग जिसे हिन्दू ऋषियों ने 'अहिंसा परमो

धर्मः' द्वारा बताया है—तो वह न केवल परिस्थितियों को बदल सकता है अपितु उन्हें पैदा भी कर सकता है। मानव को इस महान सिद्धान्त को केवल दोहराना ही नहीं है अपितु उसे कार्यान्वित करने के तरीके भी ढूंढ निकालने हैं। यह तभी हो सकता है जब वह स्वयं सादगी धारण करे और अन्यों के लिए सद्भावना रखे। दूसरों की सेवा सक्रिय सदभावना से ही हो सकती है।

"व्यक्तियों से ही राष्ट्र बनता है और वह अपने शब्दों से अधिक अपने कार्यों से अपने साथियों को प्रभावित कर सकते हैं। वह अपनी सरकारों पर भी दबाव डाल सकते हैं कि वह युद्ध आधार से शान्ति के आधार पर आ जाए। परन्तु प्रभावक ढंग से ऐसा करने के लिए उन्हें अपने जीवन को शुद्ध करना तथा अपनी आवश्यकताओं को कम करना होगा। मेरा आशय यह नहीं है कि वह जीवन के सामान्य स्तर पर न रहे। इसका अर्थ केवल इतना ही है कि उन्हें भौतिक आवश्यकताओं के वशीभूत न होकर उन पर नियंत्रण करने की स्थिति में होना चाहिए।

जब हम विश्व शान्ति की बात सोचते हैं तो हमें यह तथ्य नहीं भुला देना चाहिए कि एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग का शोषण जहां शोषक वर्ग पर सदैव बुद्धिमान भौतिक आवश्यकताओं के शासन का परिणाम है वही वह व्यक्तियों और राष्ट्रों के संघर्षों का कारण है। अतः शोषण जिस रूप में भी हो—सामाजिक राजनीतिक आर्थिक और यहां तक कि धार्मिक भी—और जहां कहीं भी हो—एशिया अफ्रीका, यूरोप और अमरीका—वहीं समाप्त होना चाहिए। व्यक्ति

की सादगी व आत्म निर्भरता में शिक्षा, जिसका दूसरा अर्थ है समाज की शिक्षा, शान्ति के लिए जरूरी है और इसीसे शोषण समाप्त हो सकता है।

मानव की क्षमता

"आज मानवता को इतना ज्ञान है और उसकी इतनी क्षमता है कि वह साधारण और आरामप्रद जीवन के प्रति अपनी मांगों की पूर्ति कर सकती है। परन्तु उसके साधनों का प्रयोग विनाशक कार्यों में हो रहा है। उन्हें रचनात्मक कार्यों में लगाया जा सकता है यदि प्रत्येक वर्ग को यह समझा दिया जाए कि उसका सुख और आराम तभी बढ़ेगा जब वह उसे मांग की बजाय त्याग में खोजेगा, और घृणा को प्रेम में, मन को विश्वास में, अधिकार को कर्तव्य में तथा शोषण को सेवा में परिवर्तित कर देगा।

अपील

'अतः विश्व के शान्तिवादियों की जन-साधारण से यह अपील है कि वह अपने व्यक्तिगत जीवन को शान्तिमय बनाने का प्रयत्न करें। राष्ट्रों से शान्तिवादियों की अपील यह है कि वह अपने नैतिक साधनों का उपयोग रचनात्मिक कार्यों में करें न कि नर-नारियों को विनाश का साधन बनाए और उन्हें घातक अस्त्रों से सुसज्जित करे।

"यही है उस शान्तिदूत का सन्देश जो अभी कल तक हमारे बीच जीवित थे और जिन्होंने अपने जीवन और आदर्शों से लाखों को प्रभावित किया था।"

: ५ :

प्रश्न और उसका सार तत्व

क्या बाबू जनतन्त्रवादी हैं ?

यह एक ऐसा प्रश्न है जो कई गम्भीर विरोधात्मक राजनैतिक उलझन प्रस्तुत कर देता है। किन्तु हम बौद्धिक वाद-विवाद से परे हटकर तथा प्रश्न की स्वीकारात्मक दिशा को ही अपना कर इस प्रश्न का निर्णयात्मक उत्तर देंगे केवल इतना ही नहीं कि हमारे बाबू जनतन्त्रवादी हैं अपितु यह भी कि वे एक जनतन्त्रीय शासन के अध्यक्ष तथा एक जनतन्त्र के प्रमुख हैं। वे हमारे नवजात प्रजातंत्र आदिभौतिक राज्य के प्रथम राष्ट्रपति हैं।

एक जनतंत्र के लिए प्रजातन्त्रीय शासन का ही होना अनिवार्य नहीं है। इन दो शब्दों का वास्तविक अन्तर प्रजातंत्र की समुचित परिभाषा किये बिना जाना नहीं जा सकता।

संक्षिप्त में, प्रजातंत्र की परिभाषा है—'शासन पद्धति जिसके प्रयोग में प्रत्येक का भाग हो; यह जनता के द्वारा, जनता के लिए जनता की सरकार है।

प्रजातंत्रीय शासन में प्रजातंत्र का अस्तित्व सन्निहित है। किन्तु किसी प्रजातंत्र में प्रजातंत्रीय शासन का होना अनिवार्य नहीं।

प्रजातंत्र का अस्तित्व किसी भी प्रणाली पर आधारित शासन के साथ चाहे वह प्रजातंत्रीय है अथवा सामन्तशाही या राजतंत्र हो सकता है। प्रजातंत्र के कठिन परिस्थिति के समय सर्वोच्च सत्ता राष्ट्रपति में ही सन्निहित की जा सकती है।

शासन की प्रणाली राज्य की एक रूपरेखा होने के साथ-साथ प्रजातंत्र सम्पन्नता तथा बन्धुत्व पर आधारित एक सामाजिक गठन है।

प्रजातंत्र अपने व्यापक अर्थों में एक राजनैतिक स्तर है, एक सामाजिक दशा तथा एक नैतिक धारणा है। सामान्य मनुष्य की सत्ता में विश्वास लेकर यह मानवता को केवल चरमलक्ष्य के रूप में अपनाना है न कि साधन के रूप में।

प्रजातंत्र भी विडम्बना है, कि मानवीय व्यक्तित्व के विकास के अर्थ प्रत्येक व्यक्ति का समान हो जाना नहीं है अपितु नैसर्गिक असमंजस्यताओं की भावनाओं में एक समन्वय का प्रयास करना ही प्रजातंत्र का ध्येय है।

समाज के प्रत्येक अंग को अधिकतम आनन्द प्राप्त करने योग्य बनाने के लिए प्रायः मुक्ति समानता और बन्धुत्व के विरोधात्मक सुसिद्धान्तों में समन्वय कराने का सतत प्रयास ही प्रजातंत्र है। यह सर्वोन्मुख स्वाधीनता का आधार है। यह विशेषज्ञ तथा साधारण श्रमिक में सद्भावनापूर्ण व्यवहार का एकमात्र विश्वास है; जन-शिक्षा का एक वृद्ध प्रयोग है यह आत्म-निर्भरता तथा उत्तरदायित्व की भावना को स्वभावजन्य बनाने में सहायक है प्रजातंत्र का चरम-

लक्ष्य नागरिक चरित्र का गठन और शिक्षण है जिसके द्वारा नागरिक स्वदेश-प्रेम से ओत-प्रोत हो उठे और इस प्रकार विनाशक राज्य-क्रान्ति न हो सके।

पाश्विक शक्ति पर निर्भर शासन के विपरीत यह विचार-विनिमय विवेचन तथा सर्व-सम्मति का शासन है।

उपर्युक्त विचारों के प्रकाश में हम प्रजातंत्र की उन सभी आलोचनाओं को जो इसे आत्म-प्रवंचना तथा आत्म-श्लाघा से पूर्ण आर्थिक रूप में एक बोझ सफेद-पोश बदमाशों की सामन्तशाही कहते हैं। तुच्छ समझकर उपेक्षा कर सकते हैं।

समस्त आधुनिक प्रजातंत्र माध्यम द्वारा प्रतिनिधित्व प्रणाली पर संगठित हैं। निरपेक्ष तथा पवित्र प्रजातन्त्र एक दुष्प्राप्य आदर्श है।

प्रजातन्त्र का गांधीवादी आदर्श आध्यात्मिक तथा नैतिक स्वरूप है। वह एक अहिंसक राज्य है जिसे वे रामराज्य कहते हैं। इस रामराज्य की व्यवस्था सेना के बिना ही होगी किन्तु शान्ति बनाये रखने के लिए अहिंसक कार्यकर्त्ताओं की आवश्यकता, सम्भव है, हो सकती है।

अहिंसा पर निर्मित और संचालित राज्य एक सम्पूर्ण अराजक राज्य होगा। बापू के शब्दों में, "वह राज्यपूर्ण और अहिंसक है जिसमें कम से कम शासन हो।" अराजकता से निकटतम सामीप्य प्राप्त राज्य ही अहिंसा पर आधारित प्रजातन्त्र होगा। आधुनिक योरोपीय तथा अमरीकन प्रजातन्त्र में वास्तविक प्रजातन्त्र का अभाव है।

प्रश्न और उसका सार तत्व

प्रजातन्त्रवादी बापू अपने गुरू के सच्चे शिष्य के रूप में रामराज्य-वादी बापू के समुचित प्रतिरूप हैं।

धर्म निरपेक्ष राज्य के प्रमुख अहिंसक विचारधारा के रामराज्य-वादी बापू का एक राजनैतिक समस्या बन जाना सम्भव है। जिसकी पूर्त्ति कठिन हो विशेषतः तब जबकि उन्हें एक अनाचारी राज्यव्यवस्था तथा सहकारी वर्ग का नैतिक पतन विदेशी शासकों से पैतृक सम्पत्ति के रूप में मिली हो।

देश का राज्य यान आन्तरिक अनाचार और नैतिक पतन के गहन और भयानक समुद्र में अन्तर्राष्ट्रीय उदधि के राजनैतिक भयंकर तूफानों से घिर कर अपनी प्रथम यात्रा पर है। बापू को सचेत और जागरूक कप्तान की भाँति अपने सहनाविकों को वीरोचित साहस से प्रेरित कर नैतिक मापदण्ड द्वारा घरेलू अनीति के रेतीले उथले स्थानों की खोज लगाकर और उनसे बचाकर हमारे नवजात प्रजातन्त्र के स्थान को विदेशी कूटनीति की चट्टानों पर टकर कर टूटने से बचाना होगा।

: ६ :

अन्तिम दृष्टिकोण की सुसमीक्षा

आज विश्व की दशा पूर्णतया अस्वस्थ है। मानवता एक परिस्थिति में है। देश-देश के लोग आर्थिक-अभाव के संकट तथा अचानक ही अणु द्वारा विश्व-युद्ध के क्षयकारी भय तथा विनाश की सम्भावित अप्रत्याशित दुर्घटना से भयभीत हैं।

इसमें आश्चर्य नहीं यदि विश्व-व्यापी संकट के समय हमारे बाबू अपने को रोगी किन्तु अप्रिय शिशु की धाय के समान रुग्ण देश की चिन्तनीय उलझनों तथा सड़ी हुई राज्य समस्याओं के समक्ष पायें—विशेषतः उस समय—जबकि वे नवजात जनतंत्र के प्रथम राष्ट्रपति के रूप में पद-प्रवेश करें।

संसार के सभी प्रजातन्त्र, प्रजातंत्रीय आदर्श के केवल निष्फल स्वरूप हैं। वास्तविक अर्थों में प्रजातन्त्र का आदर्श, समस्त आर्थिक आवश्यकताओं की सुलभ पूर्ति मानव-जीवन की सुरक्षित स्थिरता तथा विरोधी असहमत तथा सहमत सहकारी की पूर्ण स्वाधीनता है।

अन्य सभी प्रजातन्त्रीय राष्ट्रों की भाँति हमारे धर्म निरपेक्ष राष्ट्र को भी एक काँच के घर में रहना है जो विभिन्न दिशाओं से होने-वाली पत्थर की बौछार से टूट सकता है।

जब किसी राज्य में बेकारी, भुखमरी, भिखमंगी, रिश्वत, अनाचार और कालाबाजार निर्द्वन्द्व प्रश्रय पाते हों; उसकी संगठित राजनीति रुग्ण हो तो उसका राजनैतिक-आर्थिक गठन रुग्ण प्रसूता के समान एक मृत-शिशु को ही जन्म देगी।

रोग और मृत्यु के भय को भगाने के लिए, नवजात राज्य को समवेदनाशील किन्तु सुदृढ़ संरक्षक नवजात चाहिये। नवजात-राज्य को नवांकुर के समान ही भटके हुए पशुओं के आक्रमण से बचाने के लिए काँटेदार झाड़ियों के संरक्षण की आवश्यकता है।

अत्यधिक महानकार्य हमारे राष्ट्रपति के सम्मुख है। देश को आन्तरिक शुद्धि तथा बाह्य-संरक्षण की आवश्यकता है। इसे अभी अपने घर और बाहर के शत्रुओं का सामना करना है। साम्यवाद, साम्प्रदायिकता समाजवाद, नास्तिवाद, सामन्तशाही, पूँजीवाद तथा अन्य अनेक ऐसे ही वाद नवनिर्मित राज्य के लिए घातक हैं। यह हमारा दुर्भाग्य ही है कि हमें रुग्ण तथा दुर्बल राज्य व्यवस्था का भार मिला। यह कार्य विशाल पशु-शाला को शुद्ध करने तथा चिर-ज्वलन्त प्रहेलिका का उत्तर ढूँढ लेने के समान है। राज्य कार्य का सम्पूर्ण मूल्यांकन करना मेंढ़कों को तोलने के समान है। एक ओर राज्य को ईर्षालु पार्श्व-वर्ती राज्य की कुदृष्टि तथा दूसरी ओर समीप-वर्ती एकतन्त्रवादी आततायी के दुष्प्रवृत्ति-ज्वार के पलों की बाढ़ को प्रलय-प्लावन में परिवर्तित होने की सम्भावना से निश्चिन्त करने के लिए हमें सचेत दृष्टि, वीर भावना तथा रक्षा के लिए युद्ध तत्परता की आवश्यकता है।

हमारे राष्ट्रपति के समक्ष हिलादेने वाला महान कार्य है। इसे देखकर पूर्ण परिपक्व राजनैतिक भी एक बार हिल उठेगा। इसकी असाधारणता की बराबरी करने के लिए विलक्षण साहस, प्रत्युत्पन्न-मति, सहिष्णुता तथा संकल्प की दृढ़ता चाहिये।

घर की बुराई और विदेश के भय को दूर करना है। पुराने झगड़े समाप्त करने हैं नूतन योजनायें पूर्ण करनी हैं तथा नूतन नीतियों को अपनाकर चलना है। राज्य का पुनःसंगठन, पुनः उत्थान तथा पुनः निर्माण कर स्वस्थ, सबल समाज को जन्म देने का कार्य अतिशय कठिन है। इसके लिये विदेशी सहायता की अपेक्षा आत्म-निर्भरता अधिक चाहिये। अधिक अच्छे नियमों के साथ ही-साथ सबलतर कार्य-क्षमता चाहिये।

विश्वशान्ति तथा प्रजातन्त्रीय राज्य के लक्ष्य के लिए प्रेम और सत्य का अनुसरण करना होगा। प्रेम और सत्य के नियम "नियमा-वलि-पुस्तिका" के लिए नहीं है। इनके लिए किसी भी प्रकार कोई कानून नहीं बनाया जा सकता। ये वे ईश्वरीय नियम हैं जिनका पवित्र स्थान मनुष्य की आत्मा है। अपितु हमारे राज्य की शान्ति तथा 'शान्ति पूर्ण एक विश्व समाज' का निर्माण आर्थिक एवम् राज-नैतिक सिद्धान्तों पर उतना निर्भर नहीं करता जितना नैतिक नियन्त्रण तथा मानवीय व्यक्तित्व की आध्यात्मिक अभिव्यंजना पर।

मानव के नैतिक विकास, व्यक्तिगत चरित्र के उत्थान तथा प्रजा-तन्त्र के विरुद्ध आदर्श की प्राप्ति के लिये हमें महात्मा गाँधी के पथ का पथिक होना होगा—जो हिंसा का नहीं अपितु, प्रेममय, स्वाधीन

तथा सत्य से पूर्ण जीवन का पथ है।

सत्य ही ईश्वर है इसीलिये प्रजातंत्र तथा मानवीय व्यक्तित्व को सच्चा होने के लिये पूर्णतःतद्रूप होना होगा। राम-राज्य की स्थापना और उसका संचालन ही राष्ट्र-पिता का आदर्श और लक्ष्य था।

राम-राज्ज की कसौटी—शत्रु को भी पूर्ण स्वाधीनता है—किसी एक की भी स्वाधीनता का अपहरण ही राम-राज्य की भावना में विश्वास का अभाव है।

आत्म-त्याग तथा निष्छल सेवा ही आत्म-ज्ञान द्वारा आत्म-अभि-व्यंजना के रहस्य हैं। उदारता तथा न्याय ही राम-राज्य को जीवित सत्य बना सकते हैं। अहिंसा का सर्वश्रेष्ठ नियम ही यह आलोक रश्मि है जो राम-राज्य की ज्योति प्रज्वलित करता है।

बाबू, जो बापू के पुंजीभूत प्रकाश के प्रसारक हैं व्यक्ति-व्यक्ति में मानवता का दीप ज्योतित करेंगे। व्यक्ति मिलकर ही राष्ट्र बनाते हैं, अस्तु राष्ट्र-राष्ट्र का उज्ज्वलतम प्रकाश विश्व दीपावली में परिणित हो जायेगा।

निरंकुश नियमों का शासन, पुलिस के डंडे, सेना की संगीनें तथा गोलियाँ राज्य-पद्धति के अवश्यम्भावी अभिशाप हैं कहकर टाले नहीं जा सकते और आदर्श प्रजातन्त्र के संचालन और शान्ति व्यवस्था के साधनों के रूप में किसी भी प्रकार नहीं अपनाये जा सकते अपितु उन्हें तो वनचर पाश्विक सभ्यता के हथियार करार देना ही उचित होगा।

विचार के बल पर क्या यह नहीं कहा जा सकता कि शिशु-राज्य

को ब्रिटिश-दानव अथवा राज्य चिन्ह से सम्बन्धित रखना उसके स्वाभाविक विकास में बाधा उपस्थित कर रोक देना है। क्या अमरीकन आधार हमारे नवनिर्मित राज्य-यान के लिये अहितकर लंगर नहीं हैं। क्या यह कहना कि अमरीकन-काष्ठ तथा बृटिश तूँबा डूबते हुए मनुष्य के लिए सुरक्षित तट पर पहुँचने को साधन-रूप में मगर-मच्छ की दुम सा भयानक आधार सिद्ध हो सकता है समुचित ही होगा।

उपर्युक्त आलोचना का भाव और सत्य के रूप एक सुमति तथा दिशा निर्देशक ही है, वर्तमान साधनों तथा राज्य कूटनीति को चुनौती नहीं है भारत तथा विश्व शान्ति के युगारम्भ में चचा साम तथा जानबुल के तौर-तरीकों के विशेष महत्त्व तथा अन्धानुसरण की निस्सारता बतलाना ही हमारा ध्येय है।

हमारे राष्ट्रपति एक परीक्षित गांधीवादी व्यक्तिवादी हैं अस्तु वे नवांकुर को सुरक्षित रखने के लिए मूल से ही कार्यारम्भ करेंगे। एक सुयोग्य रासायनिक के रूप में राष्ट्र के खोटे द्रव्यों को आदर्श प्रजातंत्र के स्वर्ण में परिणित करने के लिए उनकी आवश्यकता है।

यहाँ यह चेतावनी देना अधिक उपयुक्त होगा कि गोडसे और उनके मृत्युदंड का तरीका दोनों ही गांधीवादी ढंग नहीं हैं। यदि एक शैतान का मार्ग है तो दूसरे की धर्म निरपेक्षता राजनैतिक प्रपंच है।

: ८ :

विश्व-शान्ति की ओर—!

संगठित समाज के युगारम्भ से ही, हिंसा, पाशविक वल, भय,
तत्कालीन तथा युद्ध का सामाजिक नियन्त्रण तथा शान्ति के आवश्यक
साधन समझ कर प्रयोग किया गया है।

विज्ञान के विकास के साथ-साथ युद्ध और युद्ध-कौशल ने रासाय-
निक तथा कीटाणु युद्ध-प्रणालियाँ अपनाकर, भारी परिमाण में सैनिक
शस्त्रास्त्र वनाकर तथा विनाश के निश्चित साधन अणुवम का आवि-
ष्कार कर भारी प्रगति की है और निश्चय कर दिया है कि विश्व में
शान्ति कभी अक्षय नहीं रह सकती।

विश्व का इतिहास अधिकांशतः युद्धों का इतिहास है। युद्ध
सदैव ही शान्ति स्थापना तथा युद्ध की समाप्ति के लिए लड़े गये,
किन्तु हमारा दुर्भाग्य कहिये कि उनका अन्त सदैव ही शान्ति की
समाप्ति में हुआ है।

यदि तृतीय विश्वयुद्ध हुआ तो कहानी पूर्णतः नई और विभिन्न
होगी। उनकी अणुवम की कल्पनातीत विनाशक शक्ति को ध्यान में
रखते हुए यह युद्ध ऐसा वीभत्स रूप प्रस्तुत कर सकता है जो गत दो
विश्व-युद्धों की भयानकता को महत्त्वहीन कर दे।

हिरोशीमा का आमूल विध्वंस एक नगर के विनाश की ऐसी दुःखद घटना है जिसमें अणुबम द्वारा विनाश की कथा कहने के लिए तृण भी शेष नहीं रह गया था।

यह लज्जाकारी भयावह घटना संसार के युद्ध-प्रेमियों के लिए एक चेतावनी होनी चाहिये कि युद्ध और विशेषतः 'अणु-युद्ध' विश्व-शान्ति का पथ नहीं है।

युद्ध, अतीत की भाँति ही आज भी मानव में आशावादी सुरक्षा की भावना उत्पन्न करने के लिए थोथा साधन है, बल्कि विश्व-शान्ति के पथ में युद्ध एक असीम भयानक रोड़ा है।

युद्ध के उपकरण अभी से होम हो रहे हैं और उनकी भयानक दुर्गन्ध से मानवता का श्वास अवरुद्ध हो रहा है। वह दिन, जब मानवता तृतीय विश्व-युद्ध का सामना करेगी, संसार के लिए महान दुर्भाग्य का दिन होगा। भगवान् करे हमारी कठिनाइयों के पलों में हम उसकी दया से वंचित न रहें।

भयानक उपाधियों के लिये उतनी ही प्रभावशाली औषधि होती है। मानवता की चिरस्थाई उपाधि युद्ध उचित समय में ही भगवान् के हाथों से कोई उपचार पा लेगी।

युद्ध के पक्ष अथवा विपक्ष के तर्क आशाशक्ति का सर्वाधिकार अथवा अन्तर-राष्ट्रीय नियन्त्रण युद्ध के भय को तब तक नहीं मिटा सकते, जब तक युद्ध-प्रथा को ही पूर्णतः तिरस्कृत एवम् वहिष्कृत ही न कर दिया जाय।

युद्ध की चर्चा ही उसका कारण है। युद्ध से युद्ध का ही जन्म

होगा। कीच से कीच को धोया नहीं जा सकता। युद्ध से युद्ध का अन्त नहीं हो सकता।

शान्ति, शान्ति से ही प्रशय पायेगी। जल से मक्खन प्राप्त नहीं हो सकता। युद्ध से शान्ति प्राप्ति असम्भव है।

हमारे प्रथम राष्ट्रपति की अध्यक्षता में, जो महात्मा गांधी के एकमात्र अवशिष्ट संस्मरण हैं, हमारे नव जनतन्त्र का जन्म और संचालन देश के तथा विश्व के उज्ज्वल-भविष्य के लिये शुभ शकुन सिद्ध होना चाहिये।

भारत की स्वाधीनता राष्ट्रपिता का प्रथम लक्ष्य थी। पुनः वे आशा करते थे कि उनकी सत्य और अहिंसा प्रणाली द्वारा भारत अपनी आन्तरिक शान्ति प्राप्त कर विश्व को शान्ति का अमर संदेश देगा।

शान्ति सहज सुलभ नहीं है, वह कोई वस्तु नहीं जिसे आप बाजार में क्रय कर सकें स्थूल संसार की सार तत्त्व जीवन का सत्य और मानवता की अंग अंश शान्ति कठिनाई से प्राप्त होती है। हमारी आत्मा विश्वात्मा का अंशमात्र है अस्तु हमें विश्व शान्ति का अनुसन्धान अपनी शान्ति के साथ-साथ मानवता में सन्निहित 'विश्वप्राण के द्वारा करना होगा।

क्या भारतीय जनतन्त्र अपना कर्त्तव्य पहिचानेगा? क्या भारतीय प्रजातन्त्र अपनी पूर्ण शुद्धि के लिए अपने प्रवर्त्तक द्वारा निर्देशित उस अहिंसा-पथ पर जो देश तथा संसार की शान्ति का एक मात्र आधार है—चलेगा ?

बापू! शान्ति-मार्ग की दिशा क्या है? बापू सत्य और अहिंसा

के उस आदर्श को, जो विश्व शान्ति तथा एक विश्व एक समाज का एक मात्र पथ है, इंगित कर उस भोरी पवित्र हरिजन कन्या की भाँति जिसे राष्ट्र पिता भारत की शान्ति प्रगति तथा समृद्धि के लिये जनतन्त्र का प्रथम राष्ट्रपति चुनना चाहते थे—हमारी आशायें पूर्ण करेंगे।